Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 7.384
Volume - 8, Issue - 5, May - 2025

DOIs:10.2018/SS/202505007 --:-- Research Paper / Article / Review

कुषाण कालीन मूर्ति कला के परिप्रेक्ष्य में मातृ शक्तियाँ

डॉ. श्रद्धा
पी. एच. डी., इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
ईमेल- shraddhajai2012@gmail.com

भारतीय कला की उत्पत्ति धर्म से रही है। धार्मिक भावना एवं धार्मिक आस्था की अभिव्यक्ति मूर्ति के रूप में हुई। देवियाँ जहाँ मातृत्व का प्रतीक रही है, वहीं शक्ति एवं शौर्य का भी प्रतीक रही है, जो भक्तों की संरक्षक के साथ-साथ दुष्टों एवं असुरों की संहारिका के रूप में परिलक्षित की गई। जहाँ सृष्टि के संचालन में देवियों की तुलना माँ के रूप में महत्वकारी है वहीं समय-समय पर दुष्टों (असुरों) का उन्मूलन करने के लिए भी देवियों का अवतरण हुआ होगा।

सृष्टि निर्माण को कारण मानकर स्त्री/पुरुष तत्व की पूजा का प्रचलन हुआ होगा। प्रकृति तथा स्त्री की प्रजनन शक्ति ने उस समय मानव समाज में आश्चर्य से युक्त भय की भावना को जागृत किया जो कालान्तर में पूजा और अर्चना में बदल गई। मातृशक्तियों की पूजा का कारण सम्भवतः सुरक्षा, उन्नति तथा सुखी जीवन की कामना रही होगी। कालान्तर में यही मातृशक्ति लक्ष्मी, दुर्गा आदि अनेक रूपों में पूजी जाने लगी। देवी रूप में मातृशक्ति की स्थापना की गई होगी। परवर्ती काल में जगतमाता या जगदम्बा आदि मातृशक्तियों को विशेष रूप में मूर्तियों को अंकित किया गया है।

कुषाण काल में मथुरा, गंधार एवं अन्य क्षेत्रीय कला शैलियों में भी देवी मूर्तियों को रूपायित किया गया। मातृदेवियों के रूप में इनका पूजन आदि काल से चला आ रहा है। देवियों में प्रमुख लक्ष्मी व दुर्गा थी एवं इनके अतिरिक्त षष्ठी, लज्जागौरी, चामुण्डा आदि देवियों की पूजा प्रचलित थी।

श्री अथवा लक्ष्मी-

श्री अथवा लक्ष्मी को सौन्दर्य, ऐश्वर्य समृद्धि एवं सम्पन्नता की देवी माना गया है। ऋग्वेद के श्रीसूक्त में लक्ष्मी का प्राचीनतम् उल्लेख देवी के रूप में उल्लिखित है।[1] इसमें देवी को पद्म पर स्थित दिखाया गया है। इसमें देवी लक्ष्मी को कमल पर खड़ी, कमल के समान वर्ण वाली, कमल की देवी, कमल की माला धारण करने वाली, कमल के समान मुख वाली, कमल प्रिया, कमल की पंखुड़ियों के आकार के समान नेत्रों वाली एवं कमल से उत्पन्न बताया गया है।

'श्री' शब्द को कुछ विद्वान[2] देवी का प्रतीक न मानकर अभ्युदय, सौन्दर्य अथवा शोभा का प्रतीक मानते है, जबकि लक्ष्मी एंव श्री एक ही है। महाभारत के शांतिपर्व में श्री कहती है कि वह एक अन्य नाम लक्ष्मी से प्रसिद्ध है।[3]

[1] श्री-सूक्त, मन्त्र-3

[2] जे0 खोंदा, आस्पेक्ट्स ऑफ अर्ली विश्नुइज्म, पृष्ठ-217

[3] महाभारत शांतिपर्व (2.7.28)

विष्णु पुराण में लक्ष्मी के लिए प्रयुक्त कई विशेष शब्द हैं, पद्म ही आलय है जिसका ऐसी पद्महस्ता, पद्म पत्र के समान ऑखों वाली पद्ममुखी, पद्मनाभि विष्णु की प्रिया देवी की वन्दना करते हैं.

देवी को इस रूप में दर्शाया गया है। उसके पयोधर पीन एवं उन्नत है, ओष्ठ लाल वर्ण के है, भौंहें कुंचित है, मणि-मुकुट धारण किये हैं, कमल स्वास्तिक एवं शंख से भूषित कुण्डल है, कंचुक धारण किये देवी के स्तन पर हार सुशोभित है, हाथ में केयूर, कटक पहने, बांये हाथ में पदम् तथा दाहिने हाथ में श्रीफल है, तप्तकंचन की प्रभा वाली देवी मेखला से सुशोभित है, सुन्दर वस्त्र धारण किये हुये आभूषणों से सुसज्जित है। उसके पार्श्व भाग में चामरग्राहिणी परिचारिकायें है, वह पद्म सिंहासन पर बैठी है। उसके पार्श्व में खड़े दिग्गज आवार्जित घंटों से उसका अभिषेक कर रहे है एवं देवतागण गन्धर्वादि देवी की स्तुति कर रहे है।[4]

विष्णु की पत्नी एवं शक्ति स्वरूपा लक्ष्मी की धनदात्री देवी के रूप में पूजा एवं अर्चना की जाती थी।[5] कुषाण काल में देवी लक्ष्मी को गणेश, कुबेर, बच्चे, सेवक एवं मातृकाओं को एक साथ दर्शाया गया है। इसका अर्थ है सभी देवी देवताओं की सम्मिलित पूजा होती रही होगी। एकल पूजा का भी विधान है, मथुरा से प्राप्त एक मूर्ति पर दो उपासक आसनस्थ लक्ष्मी के दोनों ओर हाथ जोड़े खड़े है। लक्ष्मी जी की पूजा के लिए मंदिर भी बनाये जाते थे। मिर्जापुर से प्राप्त शिलालेख पर मंदिर में लक्ष्मी प्रतिमा की स्थापना के साथ कुआँ, तालाब स्तम्भ एवं उद्याान के निर्माण का उल्लेख है।[6]

कौशाम्बी के उत्खनन से लक्ष्मी की कई मूर्तियाँ मिली। घोषितराम बिहार से प्राप्त मूर्ति का ऊपरी भाग खंडित अवस्था में है।[7] अधोभाग में देवी पैरों में चौड़े पायल पहने हुये हैं। बायाँ हाथ खंडित है और दाहिने हाथ में वलय पहने हुए हैं एवं हाथ से पैसे गिरा रही है।

प्रयागराज(इलाहाबााद) संग्रहालय[8] में लक्ष्मी की एक अन्य मूर्ति कमल पर खड़ी दिखाई गई है। देवी के दोनों हाथ मेंखला के समीप है। शिरो आभूषण के बाँये भाग में 5 प्रतीक व दक्षिण भाग में धान्यमंजरी स्पष्ट प्रतीत हो रहा है। ऊपरी भाग में कंधे से नीचे लटकता दुपट्टा तथा अधोभाग में साड़ी स्पष्ट प्रतीत हो रही है। देवी को स्वर्णभरणभूषिता कहा जाता है।

लक्ष्मी के अतिरिक्त एक राज्य लक्ष्मी की मूर्ति मिली है। जो राजसी प्रतीक होने के कारण उसे राजलक्ष्मी कहा गया। कौशाम्बी से राज्यलक्ष्मी एक मृणमूर्ति मिली है, ये मूर्ति इलाहाबाद संग्रहालय में अवस्थित है।[9]

गजलक्ष्मी-

पद्म-श्री, गजलक्ष्मी, तोरण-लक्ष्मी, राज्यलक्ष्मी, निधि तथा सौभाग्य-लक्ष्मी। इनमें गजलक्ष्मी सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। गजों से स्वर्ण क्लाशों से जलाभिषेक कराये जाने के कारण इसे गजलक्ष्मी कहते है। गजलक्ष्मी का प्रचीनतम उल्लेख ऋग्वेद से मिलता।[10]

---

[4] मिश्रा, विभा- कौशाम्बी की मृण्मूर्तियाँ, पृष्ठ-116(2005)

[5] श्रीवास्तव, रानी- कुषाण प्रस्तर मूर्तियों में समाज एवं धर्म, पृष्ठ-218

[6]श्रीवास्तव, रानी- कुषाण प्रस्तर मूर्तियों में समाज एवं धर्म, पृष्ठ-218

[7] मिश्रा, विभा- कौशाम्बी की मृण्मूर्तियाँ, पृष्ठ-116(2005)

[8] इलाहाबाद संग्रहालय सं0-5158

[9] इलाहाबाद संग्रहालय सं0-3214

[10] श्री सूक्त-3

मथुरा के पालीखेड़ा ग्राम से प्राप्त मूर्ति की आराधना गजलक्ष्मी के रूप में की जाती रही होगी। इस मूर्ति पर सनाल कमल लिए लक्ष्मी का अभिषेक दो हाथी कर रहे है।[11] कौशाम्बी से भी कुषाणयुगीन गजलक्ष्मी की प्रतिमायें प्राप्त हुयी है, जो इलाहाबाद संग्रहालय में संरक्षित है। कौशाम्बी के घोषिताराम बिहार से एक ही मंदिर में हारीति के साथ लक्ष्मी की मूर्ति भी प्राप्त हुई है। कुषाणयुगीन सुन्दर, आभूषण से युक्त मृण्मूर्ति में लक्ष्मी को गजों द्वारा जलाभिषेक कराया जा रहा है।[12] जापानी लोक कथा के अनुसार लक्ष्मी को हारीति की पुत्री माना गया है, दोनों प्रतिमाओं का एक साथ मिलना इस ओर संकेत करता है। कुछ विद्वानों के अनुसार हिन्दुओं की गजलक्ष्मी की कल्पना मायादेवी के स्वप्न से की गई है। भरहुत, सांची और बोधगया के तोरणों पर कमल पर बैठी देवी के ऊपर दो हाथी घड़े से पानी डाल रहे है। सिद्धार्थ की माता माया देवी ने स्वप्न में देखा कि एक हाथी उनके गर्भ में प्रवेश कर रहा है, उसी समय गौतम बुद्ध गर्भ में आये। इस स्वप्न के आधार पर बौद्ध धर्म में हाथी को बुद्ध का प्रतीक माना गया है। इसी प्रसंग के कारण गजलक्ष्मी को बौद्ध धर्म की देवी भी माना गया है।[13]

दुर्गा-

पराक्रम की देवी और शिव की शक्ति के रूप में सिंहवाहिनी दुर्गा की आराधना की जाती है। इन मूर्तियों में दुर्गा को चतुर्भुजी दिखाया गया है, जिनका एक हाथ अभयमुद्रा में और दूसरा कट्यवलम्बित मुद्रा में अंकित है तथा शेष दो हाथों में भाला, त्रिशूल व ढाल प्रदर्शित किया गया।[14] इसके अतिरिक्त गंधार कला के शैरवान ढेरी से प्राप्त सिंहवाहिनी दुर्गा की खंडित प्रतिमा प्राप्त हुई है। बकरी को मारते हुये अष्टभुजी देवी की मूर्ति भी प्राप्त हुई।[15]

महिषमर्दिनी-

दुर्गा के नव रूपों में देवी कात्यायनी युद्धप्रिय देवी के रूप में लोकप्रिय है। मार्कण्डेय पुराण में वर्णित है जब महिषासुर का अत्याचार बढ़ गया तब ब्रह्म, विष्णु एवं शंकर आदि देवी ने अपने तेज के अंश से देवी को उत्पन्न किया। कौशाम्बी से प्राप्त मृण्फलक पर महिषासुरमर्दिनी देवी महिषासुर का नाश करते हुए प्रदर्शित की गई। देवी के दोनों पैरों के मध्य महिष का सिर दृष्टिगत हो रहा है और देवी के 4 हाथ स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं।[16]

विष्णुधर्मोत्तर पुराण[17] में महिषासुरमर्दिनी को देवी के रूप में वर्णित किया गया है। उनके तीन नेत्र है वह सिंह पर आसीन है, उनके एक मुख एवं बीस भुजायें है, दाहिनी भुजा में शूल, खड्ग, शंख, चक्र, बाण, शक्ति, वज्र, अभय, डमरू व छत्र तथा बाँये हाथों में नागपाश, खेटक, कुठार, अंकुश, धनुष, घंटा, ध्वज, गदा,

[11] श्रीवास्तव रानी- कुषाण प्रस्तर मूर्तियों में समाज एवं धर्म, पृष्ठ-218
[12] पाण्डेय सुनीति, गंगा घाटी में प्राचीन मृण्मूर्तियों का सांस्कृतिक अध्ययन, पृष्ठ-71(2007)
[13] कुमार स्वामी, अर्ली इंडियन आइकोनोग्राफी, श्री लक्ष्मी, पृष्ठ-177
[14] श्रीवास्तव डॉ0 बृजभूषण, प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान मूर्तिकला, पृष्ठ सं0-333
[15] श्रीवास्तव, रानी- कुषाण प्रस्तर मूर्तियों में समाज एवं धर्म, पृष्ठ-218
[16] पाण्डेय सुनीति, गंगा घाटी में प्राचीन मृण्मूर्तियों का सांस्कृतिक अध्ययन, पृष्ठ-76(2007)
[17] मिश्रा, विभा- कौशाम्बी की मृण्मूर्तियाँ, पृष्ठ-122(2005)

दर्पण, मुद्गर आदि है। असुर का महिष भाग कटा रहता है और वास्तविक असुर उसकी गर्दन से निकलता दिखाया गया है।[18]

इस काल की मूर्तियों में असुर को सर्वदा महिष रूप में ही दिखाया गया है। देवी दुर्गा की महिषासुरमर्दिनी रूप की मूर्तियाँ मथुरा संग्रहालय में भी अवस्थित हैं।[19]

आश्विन मास के शुक्ल पक्ष में आज भी दुर्गोत्सव मनाया जाता है, इसके प्रथम नौ दिन नवरात्र कहे जाते है। इस पर्व में दुर्गा के महिषामर्दिनी रूप की बृहत्काय मूर्तियाँ बनाकर पूजा की जाती है।

चमुण्डा -

मार्कण्डेय पुराण में देवी चामुंडा के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है। कालिका देवी ने चंड तथा मुंड नामक दो असुरों को मार कर चण्डिका देवी को समर्पित किया अतः उन्होंने कालिका नाम चामुण्डा रख दिया। सप्तमातृका देवी के रूप में उस युग में सात देवी-देवताओं की पूजा जाती है। जैसे-ब्रह्मा की ब्रह्माणी, विष्णु की वैष्णवी, शिव की माहेश्वरी, इन्द्र की इन्द्राणी कुमार की कौमारी, वराह की वाराही तथा यम की चामुण्डा रूप में प्रसिद्ध हैं।

देवी चामुण्डा की मृतिका कला में निर्मित मूर्ति कौशाम्बी व अहिच्छत्रा से प्राप्त हुयी है, वह शुष्क स्तनी व कंकालरूपणी दिखाई गई है। कौशाम्बी से चामुण्डा की एक मृण्मूर्ति प्राप्त हुयी है, जो भारत कला भवन वाराणसी में संग्रहीत है।[20] चामुण्डा देवी का भयंकर मुख, विकराल कृश काया में दिखाया गया है।

वसुधारा (धन की वर्षा)-

समस्त अलंकारों से सुसज्जित भगवती वसुधारा का उल्लेख 18 वर्ष की युवती के रूप में हुआ है। जिनका दाहिना हाथ वरद मुद्रा में तथा बाँये हाथ में कमल धान्यमंजरी है दोनों पैरों के बीच में रत्नघट है तथा किरीट का अक्षोभ्य धारण किये है। वसुधारा या वसुन्धरा को पृथ्वी की देवी कहा गया है। अथर्ववेद के अनुसार पृथ्वी देवी, धन की देवी, वसुधारा का अर्थ धन की वर्षा है।[21] वसुन्धरा के लिये हिरण्यवक्षा, वसुदा तथा वसुधानी शब्द का प्रयोग किया है। इनकी मूर्तियों में पूर्णघट मछली प्रमुख है। पूर्णघट का अर्थ पवित्र जल है तथा मछली का अर्थ हिरण्यगर्भ/स्वर्ण की वर्षा का प्रतीक है। वसुन्धरा का जगत की समस्त निधियों (रत्न, जल, धातु आदि) पर नियंत्रण दिखाया गया है। इनकी पहचान पृथ्वी देवी से की गई है। देवी वसुन्धरा की प्रतिमा पर एक मांगलिक चिन्ह मीन और मिथुन दिखाया गया है। तीन मछलियाँ दिखाई गई है उनकी व्याख्या गंगा, यमुना एवं सरस्वती नदियों से की गई है।[22]

[18] बनर्जी जे0 एन0, डेवलपमेंट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी फलक41, चित्र-4, पृष्ठ-498

[19] श्रीवास्तव डॉ0 बृजभूषण, प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान मूर्तिकला, पृष्ठ सं0-333

[20] भारतीय कला भवन, वाराणसी संग्रहालय-22531

[21] अथर्ववेद का पृथ्वी सूक्त XII,1,644

[22] मिश्रा, विभा- कौशाम्बी की मृण्मूर्तियाँ, पृष्ठ-129(2005)

कौशाम्बी से प्राप्त मृण्मूर्ति में दो मछली पकड़े हुए स्त्री आकृति को वसुन्धरा या पृथ्वी देवी माना गया।[23] मथुरा कला शैली में भी वसुन्धरा की मूर्ति प्राप्त हुयी है, जो मथुरा संग्रहालय में संरिक्षत है। एक मूर्ति के पादपीठ पर "धरसेनस्य" लिखा है।[24]

सर्वदेवियाँ -

सर्पदेवी की अनेक मूर्तियाँ कौशाम्बी से प्राप्त हुई, इनके मुख्य सर्पाकार, कमर पतली तथा नितम्ब चौड़े है, इनके स्तन, नितम्ब व नाभि को वृत्तों, समतल रेखाओं तथा आड़ी तिरछी रेखाओं से सजाया गया है। हाथों को नहीं दर्शाया गया जबकि पैर छोटे है।[25]

एकानंशा-

नंद और यशोदा की पुत्री जिसे जन्म देते वक्त नवजात पुत्र कृष्ण के बदले गोकुल से मथुरा लाया गया, जो एकानंशा अथवा योगमाया के रूप में प्रसिद्ध हुई। यादवों ने इसे विशेष स्थान दिया क्योंकि इसने अपने जान की बाजी लगाकर कृष्ण को बचाया था। लोकदेवी के रूप में इनके सौम्य और रौद्र दोनों ही रूप में मूर्तियाँ मिलती है। एकानंशा उनका सौम्य रूप है जो विन्ध्यवासिनी एवं रूद्रकाली के नाम से विख्यात हुई। एकानंशा के रूप में मथुरा, देवगढ़ बिहार एवं कराची संग्रहालयों में इनकी मूर्तियाँ सुरक्षित है। मथुरा के शिलापट्टों पर बलराम और कृष्ण के बीच में इनका भी चित्रण मिलता है।[26]

षष्ठी-

षष्ठी देवी का अंकन छतरी से उद्भूत पाँच उपवेदियों के साथ का चित्रण है, इनकी मूर्तियाँ अग्नि ज्वालाएँ या धनुष-बाण युक्त बनी हुई है। इस देवी को कार्तिकये की माता भी कहा जाता है। इनकी मूर्तियाँ ज्यादातर मथुरा से मिली इससे पता चलता है कि इनकी पूजा कार्तिकेय की माता के रूप में की जाती है। आज के समय में भी षष्ठी देवी की पूजा बच्चों के लिये की जाती है।[27]

प्रजनन देवी-

प्रजनन देवी की मूर्ति में दोनों पैरों को फैले हुए और दोनों हाथ ऊपर उठे हुए है, और हाथों में कमल का पुष्प लिये हुये प्रजनन अंग प्रदर्शित हो रहे है ऐसा प्रतीत होता है जैसे बालक को जन्म दे रही है। इनकी मृण्मूर्तियाँ कौशाम्बी, भीटा, बानगढ़, झूँसी आदि स्थानों से प्राप्त हुई हैं।[28]

---

[23] पाण्डेय सुनीति, गंगा घाटी में प्राचीन मृण्मूर्तियों का सांस्कृतिक अध्ययन, पृष्ठ-87(2007)

[24] इलाहाबाद संग्रहालय, संग्रह-4680

[25] कौशाम्बी, इलाबाद संग्रहालय- 3393,3091, 174, 370, 4649

[26] जोशी एन0 पी0, प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान, पृ0124-125

[27] श्रीवास्तव, रानी- कुषाण प्रस्तर मूर्तियों में समाज एवं धर्म, पृष्ठ-218

[28] झूँसी 4617,इलाहाबाद संग्रहालय, आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया एनुअल रिपोर्ट-1913-14,प्लेट XXIII.4

स्टूल अथवा गोलकार आधार पर बैठी मातृदेवी-

इन देवी की मूर्ति बच्चा लिये हुये प्रदर्शित किया गया है, जो गोलाकार आधार पर बैठी हुई प्रदर्शित की गई है। इन आकृतियों में कण्ठा, मेखला तथा कर्णाभूषण पहने हुये दिखाया गया है एवं ऐसी मूर्तियाँ कौशाम्बी, बक्सर, राजघाट से प्राप्त हुई हैं।[29]

तारेनुमा मातृदेवी मृण्मूर्तियाँ-

इनकी आकृति तारेनुमा होती है, इनके मुख नैन नक्श नहीं बनाये गये है, नासिका उंगली द्वारा मिट्टी को चिकोट कर बनाई गई है। इनके हाथों व पैरों के सिरे नुकीले तथा किनारे पर फैले हुए है। इन मूर्तियों को अपनी इच्छा की पूर्ति होने पर चढ़ाया जाता था।[30]

सिनीवाली-

चन्द्रमा की कला से सम्बद्ध चार देवियाँ है जिन्हें सिनीवली, कुहू, अनुमति एवं राका कहा गया है जिनका उल्लेख वैदिक साहित्य में मिलता है। सिनीवाली देवी का सम्बंध चन्द्रमा से था। ये ग्रीक देवी सेलेनी के समान ही कार्य करती थी। सेलेनी की पूजा अमावस्या व पूर्णिमा को की जाती है।[31]

1957-1959 में गोवर्धन राय शर्मा ने कौशॉम्बी में उत्खनन करवाया वहाँ पर जो मृण्मूर्ति मिली उसकी पहचान सिनीवाली देवी से हुई। इस मूर्ति के शिरोभूषा में 5 प्रतीक खोंसे गये थे। इन प्रतीकों में त्रिशूल, अंकुश, परशु एवं आभूषणों से सज्जित देवी के दाहिने हाथ में बड़ा पुष्प है।

हारीति-

हारीति बौद्ध देवी है, देवी हरीति के विषय में कहा गया एक बार गर्भावस्था के समय बलपूर्वक एक उत्सव में नृत्य करने को कहा गया जिससे उनका गर्भपात हो गया। इसी कारण उसने प्रतिज्ञा ली कि वह समस्त बच्चों का भक्षण करेगी। बच्चों को चुराने के कारण उस नाम हरीति पड़ा। राजगृह के निवासी बुद्ध-की-शरण नाम की कृति संयुक्त-रत्न-पिंगल तथा क्षेमेन्द्र से बोधिसत्वादान कल्पलता में उल्लेख मिलता है कि प्रियंकर ने उसके बच्चों छुपा दिया, हारीति अपने शिशु को ढूंढ़ँती हुई बुद्ध के पास गई बुद्ध ने हारीति को अहिंसा और प्रेम की शिक्षा दी तथा हारीति ने बच्चों से प्रेम करने की प्रतिज्ञा है। बुद्ध ने हारीति के बच्चों के लिये अन्न की व्यवस्था की।[32]

गंधार कला में हारीति का अंकन तख्तेबही सिकरी बहलोल आदि से स्थानों से मूर्तियाँ प्राप्त हुई। उनकी मूर्ति पर यूनानी प्रभाव दिखता है। कौशम्बी, मथुरा, साँची एवं अमरावती से हारीति की अति सुन्दर मूर्तियाँ प्राप्त हुई। हारीति की मूर्ति को बच्चे एवं कुबेर के साथ अंकन किया गया। हरीति को कुबेर की पत्नी तरह दिखाया गया है।

---

[29] अग्रवाल तथा नारायण-1978, राजघाट एक्सक्लोशन्स प्लेट VII 2

[30] अग्रवाल तथा नारायण-1978, राजघाट एक्सक्लोशन्स प्लेट VII 2

[31] ऑस्कर सीफोट, डिक्सनरी ऑफ क्लॉसिकल एक्टिविटीज द्वारा नेल्टरशिप तथा सेडीज लंदन

[32] बनर्जी जे0 एन0, डेवलपमेंट ऑफ हिन्दू अक्नोग्रॉफी पृष्ठ-381

घोषिताराम बिहार क्षेत्र से हारीति की विशालकाय मृण्मूर्ति मिली है जहाँ देवी स्टूल पर बैठी। देवी की शिरोभूषा अलंकृत है, मस्तक पर टीका, कान में लटकते सुन्दर कुंडल, गले में ग्रैवेयक तथा हार स्पष्ट है। हाथ में कंयूर वलय तथा पैरों में अंलकृत पायल पहने है। आधोभाग में साड़ी है जिसकी परतें अत्यन्त कुशलता के साथ बनाई गई है। देवी के दोनों घुटनों पर है।[33]

उपरोक्त साक्ष्यों से स्पष्ट होता है कि मातृदेवी की पूजा प्रचलित थी जिसका प्रमाण मातृदेवी की अधिक संख्या में मूर्तियाँ मिली। ये शिशुओं की संरक्षिका धनवैभव सम्पन्नता एवं शक्तिदात्री के रूप में पूजी गई।[34] कहीं-कहीं पर इनके गोद में बालक बैठकर स्तनों को छूता, लटों से खेलता, माता शिशु को हाथों में झूलाकर या दोनों पैर के बीच खड़ा करके बहलाते हुये अंकन किया गया है। देवी को मानवीय एवं पशु पक्षी की आकृति में भी उकेरा गया है। ध्यान मुद्रा में भी मूर्तियाँ मिली। आसनस्थ माता पंक्तिबद्ध, स्वतंत्र पक्ति, खड़ी माताएं उत्कीर्ण की गई। पशु-मुख में बकरे, सिंह, वाराहमुखी तथा पक्षी-मुख में गरूण, तोता तथा अन्य पक्षी मुखाकृति वाली मातायें उकेरी गई है। एक फलक पर मानव, पशु-पक्षी माताओं का अंकन हुआ है। मथुरा से प्राप्त फलकों पर सप्त मातृकाओं तथा मातृकाओं के साथ कार्तिकेय का अंकन एक साथ हुआ जो विशेष पूजा का अंकन करती है। कृष्ण जन्मस्थान से प्राप्त एक तोरण के पृष्ठभाग पर अभिलेख में उत्कीर्ण है शोडास के मंत्री की पत्नी ने देवी के लिए तोरण बनवाया। जिससे स्पष्ट होता है कि देवियों के लिए भी देवी स्थानों पर तोरण का निर्माण किया जाने लगा।

पार्वती देवी (शक्ति) की पूजा अब शिव की पत्नी रूप में होने लगी। इसी समय अर्ध-नारीश्वर पूजा का अस्तित्व आ गया।

[33] कौशाम्बी एक्सवेशंस रिपोर्ट 1957-1959

[34] श्रीवास्तव, रानी- कुषाण प्रस्तर मूर्तियों में समाज एवं धर्म, पृष्ठ-218